इकाई 2 समाजशास्त्र के संस्थापक - I

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 प्रारंभिक उद्‌भव

2.3 ऑगस्ट कॉम्ट (1798–1857)

- 2.3.1 जीवन परिचय
- 2.3.2 कॉम्ट का सामाजिक परिवेश
- 2.3.3 मुख्य विचार
- 2.3.4 समकालीन समाजशास्त्र पर कॉम्ट के विचारों का प्रभाव

2.4 हर्बर्ट स्पेंसर (1820–1903)

- 2.4.1 जीवन परिचय
- 2.4.2 स्पेंसर का सामाजिक परिवेश
- 2.4.3 मुख्य विचार
- 2.4.4 समकालीन समाजशास्त्र पर स्पेंसर के विचारों का प्रभाव

2.5 सारांश

2.6 शब्दावली

2.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई में समाजशास्त्र के दो संस्थापकों के मुख्य विचारों पर चर्चा की गई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपके द्वारा संभव होगा

- ऑगस्ट कॉम्ट तथा हर्बर्ट स्पेंसर के जीवन परिचय की रूपरेखा देना
- उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि की व्याख्या करना
- कॉम्ट तथा स्पेंसर के मुख्य विचारों की विवेचना
- समकालीन समाजशास्त्र में इन प्रारंभिक चिंतकों के विचारों के प्रभाव को दर्शाना।

2.1 प्रस्तावना

यूरोप में समाजशास्त्र के **विकास** के बारे में इकाई 1 में आपने पहले ही पृष्ठभूमि के तौर पर काफ़ी पढ़ा है। अब आपको समाजशास्त्र के प्रवर्तक विद्वानों से परिचित करवाया जाएगा। इस इकाई में हमने केवल ऑगस्ट कॉम्ट तथा हर्बर्ट स्पेंसर पर ही अपना ध्यान केन्द्रित किया है। अगली इकाई में आपको कुछ अन्य समाजशास्त्रियों जैसे जॉर्ज ज़िमेल, थोर्स्टीन वेब्लेन तथा विल्फ़्रेडो परेटो से अवगत करवाया जाएगा।

इस इकाई में समाज से संबंधित विषयों के बारे में समाजशास्त्रियों के विचारों को प्रस्तुत किया गया है। भाग 2.2 में समाजशास्त्र के प्रारंभिक उद्‌भव को वर्णित किया गया है। भाग 2.3 में

ऑगस्ट कॉम्ट के सामाजिक परिवेश, उसके मुख्य विचारों और उस समय के समाजशास्त्र पर उसके विचारों के प्रभाव की चर्चा की गई है। भाग 2.4 में हर्बर्ट स्पेंसर के सामाजिक परिवेश, उसके मुख्य विचारों तथा समकालीन समाजशास्त्र में उसके विचारों के महत्व को दर्शाया गया है। अंत में 2.5 में इस इकाई का सार संक्षेप में दिया गया है।

2.2 प्रारंभिक उद्भव

इससे पहले की इकाई (इकाई 1, ई.एस.ओ.-13) में आपने यूरोप में समाजशास्त्र के उद्भव के बारे में जानकारी प्राप्त की थी। इस इकाई में हमने समाजशास्त्र के संस्थापकों की सामाजिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करने के लिए समाजशास्त्र के प्रारंभिक उद्भव का वर्णन किया है। समाजशास्त्र के सैद्धांतिक विकास की कहानी जानने हेतु हमें प्रवर्तक समाजशास्त्रियों के मुख्य विचारों को अवश्य जानना चाहिए। उनकी रचनाएं समाजशास्त्र के सामाजिक महत्व को प्रतिबिंबित करती हैं और उनके विचार ही समाजशास्त्र के मूल आधार हैं।

यह सभी को मालूम है कि मनुष्य की हमेशा से अपने व्यवहार के स्रोतों के बारे में जानने को उत्सुकता रही है। आपने अपना कुछ न कुछ समय समाज के आश्चर्यजनक ढंगों को जानने में अवश्य ख़र्च किया होगा। आपने यह उत्सुकता अवश्य ज़ाहिर की होगी कि किसी एक प्रकार का व्यवहार क्यों किया जाता है? हमारा समाज दूसरे लोगों के समाज से इतना भिन्न क्यों है? ये प्रश्न जिस तरह आज हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं, वैसे ही ये हमारे पूर्वजों के ध्यान को भी आकर्षित करते रहे होंगे।

लोगों ने इन प्रश्नों के उत्तर ढँढने के प्रयास किए हैं। लेकिन स्वयं को और समाज को समझने के उनके प्रयास उन चिंतनधाराओं पर निर्भर रहे जो उन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी मिली थीं। ये चिंतन प्राय: धार्मिक विचारों के रूप में व्यक्त हुए थे।

मानव व्यवहार और मानव समाज का व्यवस्थित अध्ययन अपेक्षाकृत अभी हाल में ही प्रारंभ हुआ है। इसका प्रारंभ अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के यूरोपीय समाज में देखा जा सकता है। इस नए दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि क्रांतिकारी परिवर्तनों से जुड़ी हुई है। ये परिवर्तन प्रबोधन (Enlightenment), फ्रांसीसी क्रांति तथा औद्योगिक क्रांति द्वारा लाए गए थे। पारंपरिक जीवन पद्धति के ध्वस्त हो जाने के कारण उन्हें सामाजिक तथा प्राकृतिक दोनों ही प्रकार की दुनिया को समझने के लिए नए तरीक़ों को विकसित करना पड़ा।

प्राकृतिक वैज्ञानिकों ने जिस तरह जीवन तथा प्रकृति के रहस्यों को उद्घाटित करने का प्रयत्न किया उसी प्रकार समाजशास्त्रियों ने सामाजिक जीवन की जटिलताओं का विवेचन करने का प्रयत्न शुरू किया और इस प्रकार समाज **विज्ञान** का जन्म हुआ। इसके आरंभ का दिग्दर्शन करने के लिए हमने ऑगस्ट कॉम्ट (1798-1857) से शुरुआत की है। कॉम्ट को समाजशास्त्र का संस्थापक माना जाता है, उसने ही इस विज्ञान को समाजशास्त्र की संज्ञा प्रदान की। इसके पश्चात् हमने समाजशास्त्र के दूसरे प्रवर्तक और अंग्रेज विद्वान हर्बर्ट स्पेंसर (1820-1903) के बारे में चर्चा की है।

कॉम्ट के विचारों पर चर्चा करने के पीछे एक ही लक्ष्य है कि समाजशास्त्र के आरंभिक प्रमुख तत्वों और प्रवृत्तियों के बारे में आपको स्पष्ट जानकारी हासिल हो।

2.3 ऑगस्ट कॉम्ट (1798-1857)

कॉम्ट का जन्म 1798 में हुआ जब फ्रांसीसी क्रांति में उबाल आ रहा था। उस समय ऐसी बहुत सी घटनाएं घटित हो रही थीं जिन्होंने आधुनिक विश्व की नींव रखने का काम किया था।

आपने पूर्ववर्ती इकाई में देखा कि फ्रांसीसी क्रांति के बाद यूरोप की सामाजिक व्यवस्था में कितने विध्वंसकारी परिवर्तन हो रहे थे। कॉम्ट के विचारों को पूरी तरह से समझने के लिए हमें इस बात पर ग़ौर करना होगा कि कॉम्ट का अपने समय के लोगों और समाज के सामने आने वाली समस्याओं से कितना परजोश सरोकार था। आइए, अब उसके जीवन परिचय पर एक दृष्टिपात करें।

2.3.1 जीवन परिचय

फ्रांसीसी समाजशास्त्री ऑगस्ट कॉम्ट (1798-1857) का जन्म एक कैथोलिक परिवार में फ्रांस के मौंटपेलियर नामक स्थान में हुआ था। उसके माता-पिता फ्रांस की शाही सत्ता के समर्थक थे। वर्ष 1814 में उसने फ्रांस के एक सर्वाधिक प्रतिष्ठित शिक्षा संस्थान, ईकोल पोलीटेकनीक (Ecole polytechnic) में प्रवेश लिया। यहां के अधिकांश प्रोफ़ेसर गणित तथा भौतिकी के प्रतिष्ठित विद्वान थे। उनकी समाज के अध्ययन में कोई ख़ास रुचि नहीं थी। लेकिन युवा कॉम्ट क्रांति के कारण फ्रांस में व्याप्त सामाजिक अव्यवस्था के प्रति काफ़ी संवेदनशील था और इसीलिए उसकी मानव व्यवहार तथा समाज के अध्ययन में काफ़ी दिलचस्पी थी। कॉम्ट ने ईकोल पोलीटेकनीक में विद्यार्थी आंदोलन में भाग लिया और इसीलिए उसे वहां से निष्कासित कर दिया गया।

ईकोल पोलीटेकनीक में वह एल.जी. बोनाल्ड तथा जोसफ द मैस्त्रे जैसे परंपरावादी सामाजिक दार्शनिकों के प्रभाव में आया। उसने मानव समाज के विकास को संचालित करने वाली व्यवस्था के बारे में धारणा उन्हीं दार्शनिकों से ली। फ्रांस के एक अन्य प्रमुख दार्शनिक कोन्डरसेट (जिनका बाद में शिरोच्छेद (beheaded) कर दिया गया) से उसने यह विचार ग्रहण किया कि यह विकास मानव समाजों में हुई प्रगति के साथ-साथ होता रहता है। वर्ष 1824 में ऑगस्ट कॉम्ट सेंट साइमन का सचिव बन गया। सेंट साइमन जन्म से तो अभिजात्य किंतु विचारों से यूटोपियाई समाजवादी (utopian socialist) था। कॉम्ट जल्दी ही सेंट साइमन का घनिष्ठ मित्र तथा शिष्य बन गया और साइमन की प्रेरणा से कॉम्ट की रुचि अर्थशास्त्र में हो गई। इसी समय कॉम्ट ने समाज के विज्ञान की एक सामान्य अवधारणा का प्रतिपादन किया जिसे उसने समाजशास्त्र की संज्ञा दी।

कॉम्ट की मुख्य आकांक्षा मानव समाज का राजनीतिक पुनर्गठन करने की थी। उसका विचार था कि इस तरह के पुनर्गठन को समाज की आध्यात्मिक तथा नैतिक एकता पर निर्भर होना होगा। इसके लिए सेंट साइमन के साथ मिलकर कॉम्ट ने कई प्रमुख विचारों को प्रतिपादित किया। कॉम्ट तथा साइमन की यह मित्रता लंबे समय तक नहीं चली और उनकी आपस में अनबन हो गई। बाद में कॉम्ट ने अपने कुछ व्याख्यानों को *"कोर्स द फ़िलोसॉफ़ी पॉज़िटिव"(Cours de philosophie positive*, पेरिस 1830-42) में प्रकाशित किया। इस कृति में उसने तीन अवस्थाओं के नियम के बारे में लिखा और समाज के विज्ञान से जुड़ी अपनी अवधारणा को व्यक्त किया। इस कृति पर काम करते हुए उसने दिमागी सफ़ाई (cerebral hygiene) के सिद्धांत की खोज की जिसके परिणामस्वरूप उसने अपने दिमाग को दूषण से बचाने के लिए अन्य विद्वानों की कृतियां पढ़ना बंद कर दिया।

1851-1854 के बीच कॉम्ट ने *सिस्टम आफ़ पॉज़िटिव पॉलिटिक्स* (4 खंडों में) नामक शोध प्रबंध लिखा। इस प्रबंध के द्वारा उसने सैद्धांतिक समाजशास्त्र की खोजों को अपने समाज की सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु प्रयुक्त करने की चेष्टा की। इसी अवधि के दौरान उसकी क्लोटिल्डे द वा से मुलाक़ात हुई और वह कॉम्ट की घनिष्ठ मित्र बन गई। मुलाक़ात के एक वर्ष बाद ही 1846 में उसकी मृत्यु हो गई। क्लोटिल्डे की मृत्यु ने कॉम्ट के विचारों को इस हद तक प्रभावित किया कि वह रहस्यवाद तथा धर्म की ओर मुड़ गया। *सिस्टम्स आफ़ पॉज़िटिव*

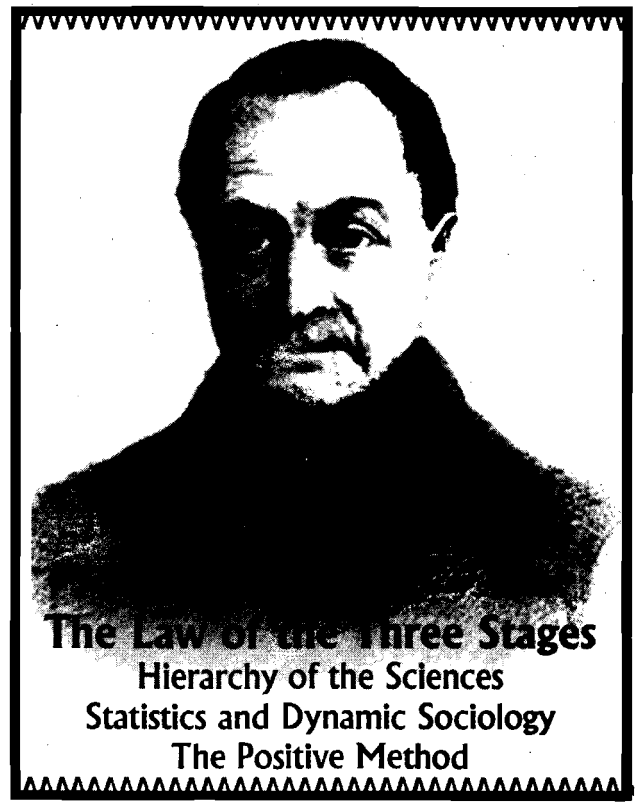

तीन अवस्थाओं के नियम

i) विज्ञानों का श्रेणीक्रम

ii) स्थैतिक एवं गतिशील समाजशास्त्र

iii) सकारात्मक पद्धति

चित्र 2.1: ऑगस्ट कॉम्ट (1798-1857)

पॉलिटिक्स में प्रतिपादित उसके विचार आंशिक रूप से प्रत्यक्षवाद से हटकर मानव धर्म की संरचना की ओर अग्रसर हो गए। विचारों में आए इस परिवर्तन के कारण उसके बहुत से शिष्य तथा बौद्धिक मित्र जैसे इंग्लैंड के जे.एस. मिल उससे विमुख हो गए। उसने सामाजिक पुनरुत्थान के मसीहा की अपनी भूमिका को इतनी गंभीरता से लिया कि उसने रूस के राजा को समाज के पुनर्गठन के संबंध में अपने विचारों की एक योजना बनाकर भेज दी। लेकिन उसकी कृतियों को उसके जीवनकाल में फ्रांस में कोई मान्यता नहीं मिली। उसकी मृत्यु के पश्चात् 1857 में, (जो भारतीय इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण वर्ष है) पहले इंग्लैंड में और फिर फ्रांस तथा जर्मनी में उसके विचारों को बहुत लोकप्रियता मिली। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के फ्रांसीसी वैज्ञानिक आंदोलन में कॉम्ट विचारधारा की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। इस आंदोलन का प्रतिनिधित्व टेने, रेनान, बर्थलोट और इंग्लैंड के जे.एस. मिल जैसे चिंतकों ने किया था।

2.3.2 कॉम्ट का सामाजिक परिवेश

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षो के दौरान फ्रांस का बौद्धिक वातावरण नए, समालोचन तथा तर्क आधारित विचारों के विकास के अनुकूल था। प्राकृतिक विज्ञानों और गणित के क्षेत्र में प्राप्त उपलब्धियां गौरव की वस्तु थीं तथा नई पद्धतियों के उपयोग तथा अनुप्रयोग में एक नए विश्वास का संचार हुआ था। आपको यह मालूम ही है कि प्रबोधन दार्शनिकों (Enlightenment philosophers) ने प्रगति तथा मानव तर्कबुद्धि के विचारों को बहुत महत्व दिया था।

ऑगस्ट कॉम्ट फ्रांसीसी क्रांति द्वारा हुए सामाजिक विनाश से भी प्रभावित हुआ था। वह फ्रांसीसी क्रांति के परिणामों के बीच रह रहा था। वह उस समय की अव्यवस्था और जनता की भौतिक तथा सांस्कृतिक निर्धनता से लगातार परेशान और बेचैन रहता था। उसकी मौलिक और जीवनपर्यन्त धुन यह रही कि अव्यवस्था की जगह व्यवस्था कैसे प्रतिस्थापित हो और समाज की आमूल पुनर्रचना कैसे की जाए।

उसके विचार में फ्रांसीसी क्रांति मानव इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ की द्योतक है। पुरातन प्रणाली समाप्त हो चुकी थी और उस समय का मौजूदा समाज वैज्ञानिक जानकारी तथा औद्योगीकरण के क्षेत्र में हुए नए विकासों को अपनाने में अक्षम था। परिवर्तनों के अनुरूप सामाजिक संस्थाओं की नई व्यवस्था के पैर अभी नहीं जम पाए थे। अव्यवस्था की इस स्थिति में जनता भी चकरा रही थी। लोगों के विचार भी दिशाभ्रमित थे। विश्वास तथा ज्ञान के बीच चौड़ी खाई थी। दूसरे शब्दों में इस अवधि के दौरान पारंपरिक मूल्य व्यवस्था गड़बड़ा गई थी। लोगों के सांस्कृतिक मूल्यों तथा लक्ष्यों में न तो संगति थी, न आत्मविश्वास और न कोई निश्चित उद्देश्य। पुरानी वफ़ादारियां ख़त्म हो चुकी थीं और नई वफ़ादारियों की जड़ें नहीं जमी थीं इसलिए लोग बड़े भ्रम की स्थिति में थे। नए जटिल, औद्योगिक समाज के लिए एक नई नीति, चिंतन तथा कर्म की एक नई व्यवस्था की जरूरत थी। लेकिन इस पुनर्रचना के लिए ज्ञान के एक विश्वसनीय आधार की ज़रूरत थी।

कॉम्ट ने यह प्रश्न उठाया कि ज्ञान के इस महल को किस तरह बनाया जाए। इस बारे में कॉम्ट का उत्तर था कि लोगों को इस दिशा में खुद पहल करनी होगी और एक ऐसे विज्ञान को ढूँढना होगा जो उन्हें विश्व के प्रति एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान करे।

अब यह संभव नहीं था कि देवताओं, धार्मिक तथा पारभौतिक शक्तियों, विश्वास तथा कर्म के पारंपरिक तरीक़ों का सहारा ढूँढा जाए। अब लोग अपने भाग्य के लिए खुद ही ज़िम्मेदार थे और इसीलिए उन्हें अपना समाज स्वयं ही तैयार करना था।

नये उत्तर देने के प्रयास में ही कॉम्ट ने समाजशास्त्र से संबंधित अपने मुख्य विचारों का प्रतिपादन किया। कॉम्ट द्वारा प्रतिपादित मुख्य विचारों का अध्ययन करने से पूर्व आइए, हम आपको कॉम्ट के चिन्तन पर सेंट साइमन के विचारों के प्रभाव के विषय में बताएं देखें; कोष्ठक 2.1: सेंट साइमन (1760-1825)। सेंट साइमन (1760-1825) के बारे में जानना इसलिए भी ज़रूरी है कि कॉम्ट द्वारा प्रतिपादित बहुत से विचारों की जड़ें सेंट साइमन की रचनाओं में देखने को मिलती है। वास्तव में कॉम्ट ने जब सेंट साइमन के सचिव के रूप में कार्य किया था तभी दोनों ने मिलकर समाज के विज्ञान का विचार प्रतिपादित किया था।

कोष्ठक 2.1: सेंट साइमन (1760–1825)

सेंट साइमन फ्रांसीसी अभिजात वर्ग से जुड़ा था लेकिन जहां तक विचारों का संबंध है वह सर्वप्रथम **यूटोपियाई** समाजवादी था अर्थात् वह एक ऐसे आदर्श समाज में विश्वास करता था जिसमें प्रत्येक को अवसर तथा संसाधनों में समान भागीदारी मिले। उसका विश्वास था कि समाज की समस्याओं का सर्वोत्तम हल यह है कि आर्थिक उत्पादन का पुनर्गठन किया जाए। इससे सम्पत्ति के स्वामियों का वर्ग अपने उत्पादन के साधनों से वंचित कर दिया जाएगा और इस प्रकार उनकी आर्थिक स्वतंत्रता ख़त्म हो जाएगी, जो उनके समय में एक महत्वपूर्ण मूल्यवान व्यवस्था थी (टिमाशेफ़ 1967: 19)। यदि आप फ्रांसीसी क्रांति पर नज़र डालें तो आपको पता चलेगा कि उस समय फ्रांस का सामंती समाज तीन वर्गों में बंटा था, पहला पादरी (clergy) दूसरा कुलीन (nobility) और तीसरा जनसाधारण (commoners)। इनमें से पहले दो वर्ग ही अधिकांश भू-सम्पत्ति तथा धन संपदा के मालिक थे व ऊंची हैसियत वाले थे। सेंट साइमन इसी सामाजिक तथा आर्थिक संरचना को पुनर्गठित करना चाहता था।

"समाज के पुनर्गठन हेतु आवश्यक वैज्ञानिक कार्य विधियों की योजना" (***Plan of the scientific operations necessary for the reorganising of society***, 1928 में प्रकाशित) नामक संयुक्त प्रकाशन में सेंट साइमन तथा कॉम्ट ने तीन अवस्थाओं के नियम के बारे में लिखा और कहा कि प्रत्येक ज्ञान की शाखा को इनमें से गुज़रना चाहिए। उनका कहना था कि सामाजिक भौतिकी अर्थात् समाज के प्रत्यक्ष विज्ञान का उद्देश्य प्रगति के प्राकृतिक तथा अपरिवर्तनीय नियमों की खोज करना है। इस **विज्ञान** को बाद में समाजशास्त्र कहा गया। ये नियम समाज के विज्ञान के लिए उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि न्यूटन द्वारा दिए गए गुरुत्वाकर्षण के नियम प्राकृतिक विज्ञानों के लिए महत्वपूर्ण हैं। सेंट साइमन और कॉम्ट के बीच स्थापित यह बौद्धिक संबंध ज्यादा दिनों तक क़ायम नहीं रह सका और अंततोगत्वा मनमुटाव के रूप में समाप्त हो गया।

कॉम्ट के अनुसार समाजशास्त्र सामाजिक घटनाओं का एक अमूर्त सैद्धांतिक विज्ञान है। शुरू में उसने इसे सामाजिक भौतिकी कहा किन्तु बाद में इसका नाम बदल दिया। उसने यह परिवर्तन इसलिए किया क्योंकि बेल्जियम के एक वैज्ञानिक एडोल्फ क्वेटलेट ने सामाजिक भौतिकी का प्रयोग सरल सांख्यिकी को व्यक्त करने के लिए किया था। इसलिए बाध्य होकर कॉम्ट को समाजशास्त्र शब्द अपनाना पड़ा जो एक लैटिन तथा ग्रीक सब्द का मिला-जुला रूप है जिसका अर्थ है "अत्यधिक सामान्यीकृत" या अमूर्त स्तर पर समाज का अध्ययन (टिमाशेफ़ 1967: 4)। अब अगले कुछ पृष्ठों में हमने कॉम्ट के मुख्य विचारों पर चर्चा की है। ये विचार तीन अवस्थाओं के नियम, विज्ञानों का श्रेणीक्रम तथा उसके द्वारा **स्थैतिक** एवं **गतिशील** समाजशास्त्र के बीच किए गए विभाजन से संबंधित हैं।

2.3.3 मुख्य विचार

आपने यह देखा कि कॉम्ट समाज का नए तरीक़े से पुनर्गठन करना चाहता था। उसने यह महसूस किया कि यूरोपीय समाज और विशेष रूप से फ्रांसीसी समाज में जो महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे हैं उनके साथ-साथ नए सिद्धांत भी बनने चाहिए। इन नए सिद्धांतों के आधार पर मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं को एकीकृत तथा संतुलित करना चाहिए। अत: ऐसे सामाजिक नियमों की खोज करना उसके लिए बहुत महत्व रखता था जो समाज में परिवर्तन के सिद्धांतों का विवेचन करें।

कॉम्ट समाजशास्त्र को समाज का एक विज्ञान ही नहीं मानता था अपितु उसका विश्वास था कि समाज के पुनर्गठन के लिए भी समाजशास्त्र का व्यावहारिक उपयोग किया जाना चाहिए। वह समाज का विज्ञान प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति विकसित करना चाहता था। यह विज्ञान न केवल मानव जाति के पिछले विकास का विवेचन करेगा अपितु उनके भावी मार्ग की भविष्यवाणी भी करेगा। उसके अनुसार मानव जाति का उसी तरह वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन किया जाना चाहिए जिस तरह प्रकृति का अध्ययन किया जाता है। प्राकृतिक नियमों जैसे कि न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण नियम या कॉपिर्नकस की यह खोज की सूर्य स्थिर है और पृथ्वी तथा अन्य ग्रह उसके चारों ओर घूमते हैं आदि से प्राकृतिक विज्ञानों में प्रगति हुई। इन नियमों से प्रभावित होकर उसे यह विश्वास हो गया कि समाज में भी सामाजिक नियमों को खोजा जा सकता है।

कॉम्ट का यह भी मानना है कि समाज के नए विज्ञान को परंपराओं की अपेक्षा तर्क तथा प्रेक्षण पर निर्भर होना चाहिए। तभी समाजशास्त्र को विज्ञान के रूप में देखा जा सकता है। प्रत्येक वैज्ञानिक सिद्धांत को प्रेक्षित तथ्यों पर और प्रेक्षित तथ्यों को वैज्ञानिक सिद्धांत पर आधारित होना चाहिए।

इस प्रकार कॉम्ट के अनुसार समाज का विज्ञान, जिसे उसने समाजशास्त्र कहा, प्राकृतिक विज्ञानों की तरह का ही होना था। समाजशास्त्र में भी प्राकृतिक विज्ञानों की तरह जांच का उपयोग करना

है अर्थात् प्रेक्षण, प्रयोग तथा तुलना करके निष्कर्ष निकालना है। हालांकि, प्राकृतिक विज्ञान की उपर्युक्त पद्धतियों के साथ-साथ कॉम्ट ने ऐतिहासिक **पद्धति** का भी प्रतिपादन किया। यह ऐतिहासिक पद्धति (इतिहासकारों द्वारा प्रयुक्त पद्धति से भिन्न) समाजशास्त्र में एक स्वस्थ विकास सिद्ध हुआ। ऐतिहासिक पद्धति द्वारा विभिन्न समाजों के बीच उनके पूरे विकास काल के दौरान तुलना की जाती है। यह पद्धति समाजशास्त्रीय जांच की केंद्र बिंदु है क्योंकि ऐतिहासिक विकास समाजशास्त्र की जान होता है।

कॉम्ट इन पद्धतियों द्वारा सामाजिक नियमों की खोज करना चाहता था क्योंकि इन नियमों को जानकर ही समाज की पुनर्रचना की जा सकती है। इस प्रकार उसके विचार में कोई भी सामाजिक क्रिया मानव समाज के लिए तभी लाभकारी हो सकती हैं जब मानव विकास के नियम स्थापित हो जाएं। ये नियम ही सामाजिक व्यवस्था के आधार को परिभाषित करते हैं।

कॉम्ट के अनुसार कोई भी वस्तु या विचारधारा निरपेक्ष नहीं होती है। प्रत्येक ज्ञान एक सापेक्ष अर्थ में ही सत्य होता है और वह अनंतकाल तक प्रामाणिक नहीं रह सकता। इस प्रकार, विज्ञान का एक स्वत: सुधारकारी स्वरूप होता है और जो भी वस्तु या विचारधारा सही नहीं रहती अस्वीकृत कर दी जाती है। इस अर्थ में इस नये विज्ञान ने परंपरा की सत्ता की वह जगह ले ली जिसे अभी तक अस्वीकार न किया जा सका था और इसलिये ही, नये विज्ञान को **सकारात्मक** विज्ञान कहा जाता है (कोज़र 1971: 5)।

तीन अवस्थाओं के नियम

वर्ष 1822 में जब कॉम्ट सेंट साइमन के सचिव के रूप में कार्य कर रहा था तब ही उसने मानव जाति के **विकास** की क्रमबद्ध अवस्थाओं को खोज निकाला। अपने अध्ययन में उसने मानव प्रजाति की प्रारंभिक अवस्था से, जिसमें वह एक बिना पँछ के वानर से उत्कृष्ट नहीं था, यूरोप की सभ्य समाज की अवस्था तक सभी को शामिल किया। अपने इस अध्ययन में उसने तुलना करने की वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया और मानव प्रगति के नियम या तीन अवस्थाओं के नियम का प्रतिपादन किया।

कॉम्ट का विश्वास था कि मानव मस्तिष्क का विकास व्यक्ति के मस्तिष्क के विकास के साथ-साथ ही हुआ है। दूसरे शब्दों में उसके अनुसार जैसे व्यक्ति अपने बचपन की निष्ठावान विश्वासी अवस्था से किशोर अवस्था की समालोचक तत्वमीमांसी (जो अस्तित्व की अमूर्त धारणाओं को समझने की कोशिश करता है) अवस्था में पहुंचता है और फिर वयस्क होने पर स्वाभाविक दार्शनिक अवस्था में पहुंच जाता है, उसी प्रकार मानव जाति भी विकसित होती है और उसकी चिंतनधारा भी तीन मुख्य अवस्थाओं में विकसित हुई है।

मानव चिंतन के विकास की ये तीन अवस्थाएं इस प्रकार है

i) **धर्मशास्त्रीय** अवस्था (theological stage)

ii) **तत्वमीमांसीय** अवस्था (metaphysical stage)

iii) **सकारात्मक** अवस्था (positive stage)

i) धर्मशास्त्रीय अवस्था में मस्तिष्क में किसी घटना को मानव प्राणी के तुलनीय प्राणियों या शक्तियों में आरोपित करके उसका विवेचन होता है। इस अवस्था में, मानव प्राणी का सभी कार्यों के पहले तथा अंतिम कारणों (आरंभ तथा प्रयोजन) की खोज करने का प्रयत्न होता है। इस प्रकार, इस स्तर पर मानव मस्तिष्क में यह मानकर चला जाता है कि सभी घटनाएं आलौकिक शक्तियों के तात्कालिक प्रभाव के कारण घटित होती हैं। उदाहरणत: कुछ जनजातियों में यह विश्वास किया जाता है कि चेचक, हैज़ा आदि जैसी कुछ बीमारियां देवताओं के प्रकोप का परिणाम होती हैं।

ii) तत्वमीमांसीय अवस्था में मस्तिष्क में घटनाओं की प्रकृति का समान अमूर्त अस्तित्व के माध्यम से विवेचन होता है। ये अमूर्त अस्तित्व मानवरूपी तत्व हैं। तत्वमीमांसीय विश्व के अर्थ तथा उसकी व्याख्या सार तत्वों, आदर्शों व स्वरूपों के संदर्भ में होती है अर्थात् इसे चरम वास्तविकता जैसे ईश्वर की संकल्पना के रूप में परिभाषित किया जाता है।

iii) सकारात्मक अवस्था में घटनाओं को "मूल स्रोतों" या अंतिम कारणों के रूप में देखना बंद कर दिया जाता है क्योंकि न तो इन्हें तथ्यों के रूप में जांचा जा सकता है और न ही उनका हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने में ही उपयोग किया जा सकता है। इस अवस्था में मानव मस्तिष्क स्वयं को उनके नियमों के अध्ययन में लगाता है अर्थात् उनके अनुक्रम तक सादृश्य के अपरिवर्तनीय संबंधों का अध्ययन करता है (कोज़र 1971: 7)। ऐसे नियम प्रस्थापित होते हैं जो तथ्यों को एक दूसरे से जोड़ते हैं और जो सामाजिक जीवन को नियमित करते हैं।

कॉम्ट का यह मानना था कि मानव चितंन की प्रत्येक अवस्था का विकास अनिवार्य रूप से पूर्ववर्ती अवस्था से ही होता है। जब पूर्ववर्ती अवस्था पूरी हो जाती है तभी नई अवस्था का विकास होता है। उसने मानव चितंन की तीन अवस्थाओं के सामाजिक संगठन, समाज में पाए जाने वाली सामाजिक व्यवस्थाओं के प्ररूपों तथा समाज में पाई जाने वाली सामाजिक इकाइयों के प्रकारों तथा भौतिक अवस्थाओं के साथ परस्पर संबंध दिखाए हैं। उसका विश्वास था कि सामाजिक जीवन का विकास उसी ढंग से होता है जिस तरह मानव चितंन में क्रमिक परिवर्तन आते हैं।

कॉम्ट के अनुसार सभी समाजों में परिवर्तन आते रहते हैं। एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें समाज में सामाजिक स्थिरता होती है। ऐसे समाज में बौद्धिक सामंजस्य होता है और समाज के विभिन्न भाग संतुलन में होते हैं। यह समाज का समन्वित काल होता है। लेकिन जब क्रांतिक काल आता है तो पुरानी परंपराएं, संस्थाएं आदि गड़बड़ा जाती हैं। बौद्धिक सामंजस्य समाप्त हो जाता है और समाज में एक असंतुलन फैल जाता है। कॉम्ट के विचार में फ्रांसीसी समाज इसी क्रांति काल से गुज़र रहा था। उसके अनुसार समाज अराजकता के एक संक्रमण काल के दौर से अवश्य गुजरता है जो कम से कम कुछ पीढ़ियों तक चलता रहता है और यह काल जितने ज़्यादा समय तक चलता रहेगा, समाज का पुनर्नवीकरण उतना ही पूर्ण होगा (कोज़र 1971: 8)।

मानव प्रजाति के इतिहास में मानव चिंतन की धर्मशास्त्रीय अवस्था में धर्म का राजनीति पर प्रभुत्व रहता है और शासन फ़ौजी शासकों का होता है। तत्वमीमांसक अवस्था में चर्च के पादरियों तथा वकीलों का प्रभुत्व होता है। यह अवस्था लगभग मध्यकाल तथा पुनर्जागरण आंदोलन के समकालीन थी। सकारात्मक अवस्था में, जिसका उदय कॉम्ट के जीवन-काल में हो ही रहा था, औद्योगिक प्रशासकों तथा वैज्ञानिक मार्ग दर्शकों का प्रभुत्व होगा।

धर्मशास्त्रीय अवस्था में सामाजिक इकाई के रूप में परिवार एक महत्वपूर्ण इकाई था। तत्वमीमांसक अवस्था में राज्य एक महत्वपूर्ण इकाई था और सकारात्मक अवस्था में संपूर्ण मानव जाति प्रचालक सामाजिक इकाई होगी।

कॉम्ट का विश्वास था कि बौद्धिक विकास अर्थात् मानव चिंतन का विकास मानव प्रगति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार होता है। हालांकि, उसने अन्य कारकों को भी अस्वीकार नहीं किया। उदाहरणत: उसने जनसंख्या में वृद्धि को एक ऐसा प्रमुख कारक माना जो मानव प्रगति की दर का निर्धारण करता है। जितनी ज़्यादा जनसंख्या होगी उतना ही अधिक श्रम विभाजन होगा। समाज में जितना अधिक श्रम विभाजन पाया जाएगा उतना ही वह समाज विकसित होगा। इस प्रकार उसने श्रम विभाजन को सामाजिक विकास की प्रक्रिया का एक शक्तिशाली कारक माना

है। कॉम्ट के विचारों का अनुसरण करते हुए एमिल दखाईम ने सामाजिक श्रम विभाजन का सिद्धांत प्रतिपादित किया, जिसके बारे में इसी पाठ्यक्रम के खंड 3 में आपको अवगत करवाया जाएगा।

तीन अवस्थाओं का नियम विज्ञानों के श्रेणीक्रम के साथ भी जुड़ा हुआ है। जैसे-जैसे चिंतनधाराओं का विकास होता है वैसे ही विभिन्न विज्ञान स्थापित होते जाते हैं। समाजशास्त्र को छोड़कर सभी विज्ञान सकारात्मक अवस्था तक पहुँच चुके हैं लेकिन समाजशास्त्र के विकास के साथ ही यह प्रक्रिया पूरी हो जाएगी। आइए अब हम विज्ञानों के श्रेणीक्रम पर विचार करें। परंतु पहले सोचिए और करिए 1 को पूरा कर लें।

सोचिए और करिए 1

आपने अभी ऑगस्ट कॉम्ट के विचारों को पढ़ा है। समाज संबंधी उसके विचारों के संबंध में, समन्वित काल में सामाजिक स्थिरता तथा संतुलन और क्रांतिक काल में सामाजिक अशांति अथवा असंतुलन होता है आदि। हमारे अपने देश की सामाजिक अवस्था के बारे में दो बुजुर्गों से चर्चा करिए।

अपनी चर्चा के आधार पर भारत की वर्तमान सामाजिक दशा के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। यदि संभव हो तो अपनी टिप्पणी की अपने अध्ययन केंद्र के दूसरे विद्यार्थियों की टिप्पणियों से तुलना कीजिए।

विज्ञानों का श्रेणीक्रम

कॉम्ट के अनुसार विज्ञानों की जांच करने से पता चलता है कि न केवल सामान्य मानव चिंतनधाराएं उपर्युक्त तीनों अवस्थाओं में होकर गुज़री हैं अपितु प्रत्येक विषय भी उसी ढंग से विकसित हुआ है। अर्थात् प्रत्येक विषय का एक सामान्य तथा सरल स्तर से अत्यधिक जटिल स्तर की ओर विकास हुआ है। उसने विज्ञानों की श्रेणीक्रम व्यवस्था प्रस्तुत की जो निम्नलिखित के साथ मेल खाती है।

i) विभिन्न विज्ञानों में ऐतिहासिक रूप से आरंभ तथा विकास करने का क्रम

ii) एक दूसरे पर निर्भर होने का क्रम (प्रत्येक अपने पूर्ववर्ती पर आधारित होता है और अपने परवर्ती के लिए मार्ग प्रशस्त करता है)

iii) अपनी विषय वस्तु के संबंध में निरंतर कम होती सामान्यता तथा बढ़ती हुई जटिलता तथा

iv) अपने अध्ययन के अंतर्गत आने वाले तथ्यों में संशोधन करने की ज़्यादा से ज़्यादा क्षमता।

इस तरह, विज्ञानों के आरंभ तथा जटिलताओं के आधार पर विज्ञानों का क्रम इस प्रकार था - गणित, रसायन, विज्ञान, खगोलिकी, भौतिकी, जैविकी, समाजशास्त्र तथा अंत में नैतिक मूल्य। नैतिक मूल्य नामक विषय से कॉम्ट का अभिप्राय वास्तव में मानव का व्यक्तियों के रूप में अध्ययन करने से था (ऐसा अध्ययन जो समाजशास्त्र के बाद आएगा और मनोविज्ञान तथा नीतिशास्त्र का मिश्रित रूप होगा)।

इनमें समाजशास्त्र सबसे जटिल विज्ञान था क्योंकि इसमें सबसे जटिल विषय अर्थात् समाज का अध्ययन करना था। इसलिए समाजशास्त्र का जन्म अन्य विज्ञानों के बहुत समय बाद हुआ। अन्य विज्ञानों की विषय वस्तु समाजशास्त्र की तुलना में सरल थी।

समाजशास्त्र का जन्म मानव जाति द्वारा अपने समाज से संबंधित कुछ नए वस्तुनिष्ठ तथ्यों, जैसे सामाजिक अवस्था, मलिन बस्तियों का विस्तार, ग़रीबी आदि को पहचानने से जुड़ा हुआ है। इन तथ्यों से प्रभावी ढंग से निबटने के लिए उनका विवेचन करना आवश्यक है। कॉम्ट ने जब

समाजशास्त्र को विज्ञानों के श्रेणीक्रम का सर्वोच्च शिखर कहा तो वह विज्ञान को सामान्य रूप से एकीकृत करना चाहता था। समाजशास्त्र को अन्य विज्ञानों की तुलना में कोई ऊंची हैसियत देने का दावा नहीं करना था। वह तो केवल यह चाहता था कि सकारात्मक ज्ञान में वृद्धि के साथ-साथ सभी विज्ञानों का एक दूसरे के साथ संबंध स्थापित किया जा सकता है।

कॉम्ट के अनुसार सभी विज्ञान इन तीन अवस्थाओं - धर्मशास्त्रीय, तत्वमीमांसक तथा अंत में सकारात्मक अवस्था से होकर गुज़रते हैं। लेकिन अलग-अलग विज्ञान इन तीनों अवस्थाओं से एक साथ नहीं गुज़रते। वास्तव में तो जो विज्ञान श्रेणीक्रम में जितना अधिक ऊंचा होगा, उतनी ही देरी से वह एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाएगा। सकारात्मक ज्ञान के विकास के साथ-साथ उसने समाजशास्त्र के लिए सकारात्मक पद्धतियों को अपनाने का समर्थन किया (टिमाशेफ़ 1967: 23)।

स्थैतिक एवं गतिशील समाजशास्त्र

कॉम्ट ने समाजशास्त्र को दो प्रमुख भागों स्थैतिक (static) और गतिशील (dynamic) समाजशास्त्र में विभाजित किया। इस विभाजन का विचार जैविकी (biology) से लिया गया क्योंकि वह विज्ञानों के श्रेणीक्रम की धारणा में विश्वास रखता था। जैविकी समाजशास्त्र से एक नम्बर पहले वाला पूर्ववर्ती विज्ञान है और इसलिए इन दोनों के लक्षण एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं।

स्थैतिक समाजशास्त्र में समाज के अस्तित्व की दशाओं का अध्ययन किया जाता है जबकि गतिशील समाजशास्त्र के अंतर्गत समाज की सतत गतिशीलता या एक अवस्था के बाद दूसरी अवस्था आने के नियमों का अध्ययन किया जाता है। दूसरे शब्दों में, पहले भाग में सामाजिक व्यवस्था और दूसरे भाग में सामाजिक परिवर्तन या समाज में प्रगति का अध्ययन किया जाता है।

कॉम्ट के बारे में चर्चा करते हुए टिमाशेफ़ ने लिखा है कि स्थैतिकी मनुष्य के समाज में अस्तित्व की दशाओं के बीच समरसता या क्रमबद्धता का सिद्धांत है। जबकि गतिशीलता सामाजिक प्रगति का सिद्धांत है और यही प्रगति समाज का मौलिक विकास या संवृद्धि का द्योतक है।

टिमाशेफ़ (1967: 25) के अनुसार व्यवस्था तथा प्रगति घनिष्ठ रूप से एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं क्योंकि प्रगति के अनुकूल हुए बिना कोई सामाजिक व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकती और तब तक समाज में कोई प्रगति नहीं हो सकती जब तक वह व्यवस्था में समाहित न हो। इस प्रकार यद्यपि विश्लेषण की दृष्टि से स्थैतिक और गतिशील समाजशास्त्र में भेद किया जाता है लेकिन वास्तव में स्थैतिक तथा गतिशील नियम पूरी प्रणाली में एक दूसरे से जुड़े होते हैं। कॉम्ट द्वारा स्थैतिकी और गतिशीलता में किया गया अंतर, जो कि प्रत्येक व्यवस्था तथा प्रगति के साथ जुड़ा है, वर्तमान में स्वीकार्य नहीं है क्योंकि आज समाज इतने जटिल हो गए हैं कि उन्हें व्यवस्था तथा प्रगति की साधारण धारणाओं द्वारा विवेचित नहीं किया जा सकता। कॉम्ट के विचार प्रबोधन काल (Enlightement period) की भावना से प्रभावित थे और इसी काल में ये विचार पनपे थे। समकालीन समाजशास्त्री इन विचारों से सहमत नहीं हैं। लेकिन उसका समाजशास्त्र का स्थैतिक और गतिशील में विभाजन आज भी सामाजिक संरचना तथा सामाजिक परिवर्तन शब्दों के रूप में विद्यमान है।

2.3.4 समकालीन समाजशास्त्र पर कॉम्ट के विचारों का प्रभाव

अब आपको यह महसूस हो गया होगा कि समाज के विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र का आरंभ और विकास का श्रेय ऑगस्ट कॉम्ट के योगदानों को जाता है। उसके विचारों ने सोरोकिन, जे.एस.मिल, लेस्टर वार्ड, मैक्स वेबर, दर्खाइम तथा अन्य प्रमुख समाजशास्त्रियों को प्रभावित किया।

कॉम्ट के तीन अवस्थाओं के नियम को समकालीन समाजशास्त्रियों ने कमोबेश अस्वीकार सा ही कर दिया है। लेकिन विचारों तथा संस्कृति के विकास में अवस्थाओं की अनिवार्य धारणाओं को कुछ संशोधित रूप में स्वीकार किया गया है। इसको सोरोकिन जैसे समाजशास्त्रियों की कृतियों मे देखा जा सकता है।

कॉम्ट के विचारों में उन अधिकांश प्रवृत्तियों को पहले ही देखा जा सकता है जो आजकल के समाजशास्त्र में दृष्टिगोचर होती हैं। उसके समाजशास्त्र के विषय क्षेत्र तथा पद्धतियों विषयक विचारों को बाद के समाजशास्त्र में भी देखा जा सकता है। अगले भाग में एक अन्य समाजशास्त्री, हर्बर्ट स्पेंसर, के बारे में बताया गया है। कॉम्ट के विचारों की तरह स्पेंसर के विचार समाजशास्त्र के इतिहास में काफ़ी महत्वपूर्ण हैं।

बोध प्रश्न 1

i) निम्नलिखित में से किस किस को कॉम्ट के सिद्धांत का एक हिस्सा माना गया है ?

   क) विकास की तीन अवस्थाओं का नियम

   ख) प्राकृतिक विज्ञानों के अनुरूप समाज के विज्ञान की रचना पर बल देना

   ग) समाज के विकास की तीन अवस्थाओं में से एक लोकतांत्रिक अवस्था है।

   घ) विकास की अंतिम अवस्था सकारात्मक अवस्था है।

   ड़) सबसे पहले जन्म लेने वाले विज्ञानों में से एक विज्ञान समाजशास्त्र है।

   च़) तत्वमीमांसक अवस्था में मस्तिष्क किसी घटना को प्रकृति समान अमूर्त अस्तित्व के माध्यम से विवेचित करता है।

   छ) सकारात्मक विज्ञान का काम नियमों की खोज करना है।

   ज) प्रत्यक्षवाद को परिवर्तन का आधार भी समझा गया है।

ii) कॉम्ट के समाजशास्त्र की तीन मुख्य धारणाएं बताइए।

.....

.....

.....

iii) समाज में श्रम विभाजन पर कॉम्ट के विचारों का विवेचन करिए। उत्तर तीन पंक्तियों में दीजिए।

.....

.....

.....

iv) समाज का विज्ञान जिसे समाजशास्त्र कहा जाता है लोगों के प्रारंभिक विचारों से कैसे भिन्न है? तीन वाक्यों में उत्तर लिखिए।

.....

.....

.....

2.4 हर्बर्ट स्पेंसर (1820–1903)

हर्बर्ट स्पेंसर को ऑगस्ट कॉम्ट का समकालीन कहा जा सकता है। स्पेंसर इंग्लैंड निवासी था। उसने समाजशास्त्र के क्षेत्र में बहुत से मूल विचारों का योगदान किया। कॉम्ट की तरह वह भी समाजशास्त्र को समाज के एक विज्ञान के रूप में प्रतिष्ठापित करने में प्रयत्नशील था। स्पेंसर कॉम्ट के विचारों के संसर्ग में तो आया परंतु वह कॉम्ट के विचारों से सहमत नहीं था। उसने समाज का अध्ययन अलग दृष्टिकोण से किया। उसका समाजशास्त्र विकासवादी सिद्धांत तथा जैव सादृश्य पर आधारित था। इन विचारों के बारे में और अधिक जानकारी बाद में दी जाएगी। आइए, पहले स्पेंसर के जीवन परिचय तथा सामाजिक परिवेश के बारे में कुछ चर्चा करें।

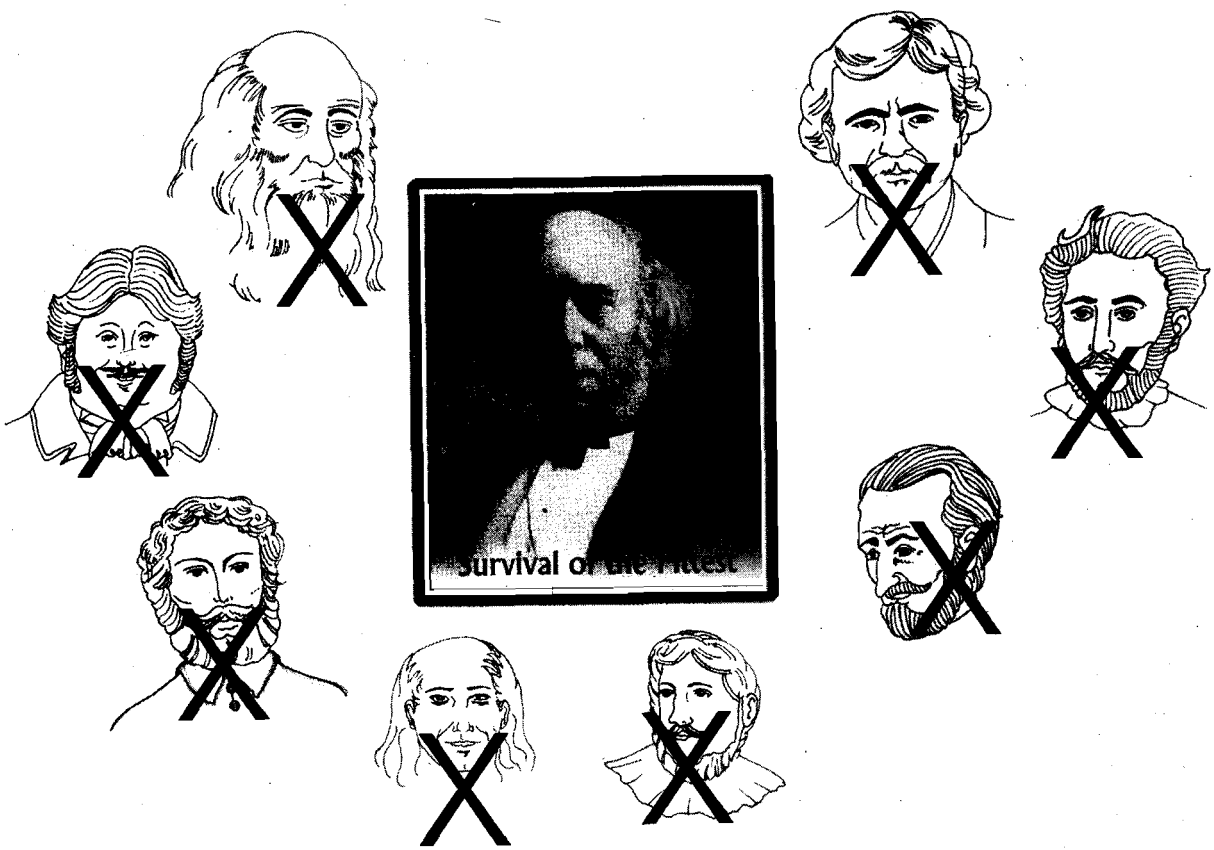

चित्र 2.2: हर्बर्ट स्पेंसर (1820–1903): सर्वोपयुक्त की उत्तरजीविता का अनुभवपरक उदाहरण

2.4.1 जीवन परिचय

हर्बर्ट स्पेंसर (1820-1903) का जन्म 27 अप्रैल को डर्बी के एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ। उसके पिता, जॉर्ज स्पेंसर, एक स्कूल अध्यापक थे। वह और उसका पूरा परिवार कट्टर परंपरा विरोधी तथा व्यक्तिवादी दृष्टिकोण वाला था। स्पेंसर अपने माता-पिता की नौ संतानों में सबसे बड़ा था और अकेले वह ही वयस्क आयु प्राप्त कर पाया था। बाकी सभी का कम आयु में ही देहान्त हो गया था। संभवत: यही कारण था कि अपने विकास संबंधी सिद्धांत में उसने सर्वोपयुक्त की उत्तरजीविता (survival of the fittest) के डार्विनवादी विचार का प्रतिपादन किया था।

स्पेंसर ने कोई औपचारिक स्कूली शिक्षा नहीं पाई और उसके पिता तथा चाचा ने उसे घर पर ही पढ़ाया। वह केवल कुछ समय के लिए एक छोटे निजी स्कूल में अवश्य गया। अपनी आत्मकथा में उसने लिखा है कि उसका सर्वोत्तम प्रशिक्षण गणित में हुआ था। प्राकृतिक विज्ञान, साहित्य, इतिहास आदि जैसे अन्य विषयों में कोई व्यवस्थित प्रशिक्षण न पाने के बावजूद उसने जैविकी तथा मनोविज्ञान पर उत्कृष्ट ग्रंथ लिखे।

युवक स्पेंसर ने रेल रोड इंजीनियरी के क्षेत्र में इंजीनियर के रूप में काम करना शुरू किया किंतु बाद में उसने यह काम छोड़ दिया और एक पत्रकार के रूप में काम करने लगा। वह सुप्रतिष्ठित अंग्रेज़ी प्रकाशन, *इकॅनोमिस्ट* (*Economist*), का संपादक बना और कुछ वर्ष बाद यहां से त्याग पत्र देकर वह एक स्वतंत्र लेखक बन गया। वह उपन्यासकार जार्ज इलियट का घनिष्ट मित्र बन गया। उनकी मित्रता विवाह में परिणत नहीं हो पाई और स्पेंसर ने फिर विवाह ही नहीं किया। उसने ग़रीबी तो नहीं देखी पर वह कभी धनवान भी नहीं बन सका।

1850 में उसकी प्रथम पुस्तक, *सोशल स्टैटिक्स* (*Social Statics*) प्रकाशित हुई और इस पुस्तक को बुद्धिजीवी वर्ग में मान्यता मिली। इस पुस्तक में उसने अपने समाजशास्त्रीय सिद्धांत के मुख्य विचारों को प्रस्तुत किया। सामाजिक स्थैतिकी के शीर्षक की वजह से कुछ चिंतकों ने उस पर कॉम्ट के विचारों को फैलाने का दोषारोपण किया। लेकिन स्पेंसर ने कहा कि ये निबंधन उसके स्वयं के हैं और उसने कॉम्ट का नाम तो सुना है किंतु वह उसके विचारों से अवगत नहीं है। उसने यह भी कहा कि प्रारंभ में उसकी पुस्तक का शीर्षक *डेमोस्टैटिक्स* (*Demostatics)* था।

स्पेंसर पर चार्ल्स डार्विन की पुस्तक *द ओरिजन ऑफ स्पीसीज़* (*The Origion of Species*, 1859) का काफ़ी प्रभाव हुआ था। उसने डार्विन के विकास संबंधी विचारों से बहुत कुछ ग्रहण किया। वास्तव में, उसने कहा कि वह पहला व्यक्ति था जिसने डार्विन द्वारा दिए गए "प्राकृतिक वरण" (natural selection) तथा सर्वोपयुक्त की उत्तरजीविता के बुनियादी विचारों की महत्ता को समझा। स्पेंसर ने इन विचारों को समाज के अध्ययन में लागू किया।

स्पेंसर ने अहस्तक्षेप या मुक्त बाज़ार (laissez faire) के सिद्धांत का समर्थन किया, जिसका उस समय के अंग्रेज़ अर्थशास्त्री भी समर्थन कर रहे थे। 1882 में वह अमरीका के दौरे पर गया था। लेकिन ज़िंदगी के अंतिम दिनों में उसे लगा कि उसकी कृतियों को उतनी प्रतिष्ठा नहीं मिली, जितनी कि उसे आशा थी।

2.4.2 स्पेंसर का सामाजिक परिवेश

स्पेंसर के जीवनकाल के समय समाज में वैसी ही उथल-पुथल मची हुई थी जैसी कि कॉम्ट के समय में थी। उन दोनों के सामने समस्यायें भी एक सी थीं। महत्वपूर्ण अंतरों के बावजूद, इन दोनों विचारकों की चिंताओं और केंद्र बिंदुओं में व्यापक रूप से समानता थी।

दोनों का प्रगति में विश्वास था और ऐतिहासिक विकास की एकता तथा अनुत्क्रमणीयता में भी उन दोनों की अटूट आस्था थी। उस काल के अन्य प्रमुख चिंतक जैसे मार्क्स आदि भी इन विचारों में आस्था रखते थे। इन चिंतकों के इस काल को महान आशा की शताब्दी कहा जाता है। इसलिए समाज के प्रगतिशील विकास के नियम में उनका विश्वास उनके तर्क का केंद्रीय बिंदु था। आइए, अब हर्बर्ट स्पेंसर के कुछ मुख्य विचारों पर चर्चा करें।

2.4.3 मुख्य विचार

हर्बर्ट स्पेंसर की समाजशास्त्रीय रचनाओं, उदाहरणत: *सोशल स्टैटिक्स* (1850), *द स्टडी ऑफ़ सोशियोलोजी* (1873), *प्रिंसिपल्स ऑफ़ सोशियोलॉजी* (1875-96) आदि में विकास संबंधी विचार ही प्रधान है। स्पेंसर का विश्वास था कि सभी कालों के दौरान सामाजिक विकास का एक सरल समान या समरूप संरचना से एक जटिल, बहुरूपी या विषम संरचना की ओर होता रहा है। स्पेंसर के विचारों पर चार्ल्स डार्विन की रचना, *द ओरिजिन ऑफ़ स्पीशीज* (1859), का काफ़ी प्रभाव पड़ा था। इस पुस्तक ने उसके विचारों पर क्रांतिकारी प्रभाव डाला कि किस तरह पृथ्वी पर कोशिकीय जीव से मानव प्राणी जैसे बहुकोशिकीय जटिल जीव की ओर जीवन का विकास हुआ है।

हालांकि स्पेंसर ने समाजशास्त्र पर बहुत सी रचनाएं लिखीं लेकिन उसने इस शास्त्र की कोई औपचारिक परिभाषा नहीं दी। उसके अनुसार सामाजिक प्रक्रिया अनूठी होती है। इसलिए समाजशास्त्र को विज्ञान के रूप में विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं पर विकास के नियमों को लागू करके समाज की वर्तमान अवस्था की व्याख्या करनी चाहिए। इस प्रकार उसके शोध में विकासवादी सिद्धांत का मुख्य स्थान है। इस सिद्धांत की व्याख्या करते हुए जैविक अनुरूपता (organic analogy) के अर्थ और महत्व की चर्चा की जाएगी। सामाजिक विकास में विभिन्न समाजों की स्थिति के आधार पर स्पेंसर द्वारा किए गए समाजों के वर्गीकरण के बारे में भी आपको जानकारी दी जाएगी।

विकासवादी सिद्धांत

स्पेंसर के ज्ञान की पद्धति उसके इस विश्वास पर टिकी थी कि संपूर्ण विश्व और उसमें मानव के स्थान को समझने की मूल अवधारणा विकास ही है। विकास की अवधारणा भी इस मान्यता पर टिकी है कि प्रकृति के विभिन्न रूप चाहे वह पहाड़ हों या समुद्र, पेड़ हों या घास, मछली हों या रेंगने वाले जीव, पक्षी हों या मानव, सभी समान बुनियादी भौतिक पदार्थ के रूप तथा रूपांतर होते हैं।

अत: सभी प्रकार का ज्ञान हमारी अनुभूत दुनिया के इन विभिन्न रूपांतरणों के विन्यासों का व्यवस्थित तथा परीक्षण योग्य कथन होता है। प्रकृति के प्रत्येक तत्वों के विद्यमान रूपांतरण की यह बुनियादी प्रक्रिया ही विकासवादी सिद्धांत है। व्यवस्थित परीक्षण योग्य कथनों से हमारा तात्पर्य उन विचारों से है जो विश्व में होने वाले परिवर्तनों के अर्थ में हमेशा सही या गलत सिद्ध किए जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में हमारा अभिप्राय पश्थ्वी पर होने वाले परिवर्तनों की विकास की प्रक्रिया से है।

इस बात को आसानी से समझने हेतु आप अपने शरीर तथा अपने स्वयं के बारे में सोचिए। हमारा शरीर मुख्य रूप से जल, रक्त, अस्थियों तथा मांस से मिलकर बना है और इनमें से प्रत्येक तत्व प्रकृति से ही आया है। मृत्यु के बाद व्यक्ति के ये तत्व फिर से प्राकृतिक पदार्थों में जा मिलते हैं।

इस प्रकार परिवर्तन की सभी प्रक्रियाएं एक समान होती हैं अर्थात् वे भौतिक पदार्थों से उत्पन्न होती हैं, रूपातंरण तथा परिवर्तन का अपना विन्यास रखती हैं और अपने विन्यास के अनुसार यथासमय उनका विनाश हो जाता है और प्रकृति में फिर से मिल जाती हैं। इस प्रक्रिया में वे निम्न ढंग से परिवर्तित होती हैं।

i) सरलता की दशा से एक व्यवस्थित जटिलता की दशा की ओर

ii) अनिश्चितता की दशा से निश्चितता की दशा की ओर

iii) एक ऐसी दशा से जहां उसके हिस्से अपेक्षाकृत अविशिष्ट होते हैं, विशिष्टता की दशा की ओर, जिसमें उसके हिस्से तथा प्रकार्य जटिल विशिष्टीकरण से युक्त होते हैं

iv) एक अस्थायी दशा से स्थायी दशा की ओर, पहली दशा में काफ़ी समान इकाइयों की बहुलता होती है और वे अपेक्षाकृत अपने व्यवहार में असंगत तथा असंबद्ध होती हैं जबकि दूसरी दशा में अपेक्षाकृत कम हिस्से होते हैं। आज मानव प्राणी इतने जटिल रूप से संगठित तथा जुड़े हुए हैं कि उनका व्यवहार नियमित, संगत तथा पुर्वानुमानित है।

जैविक अनुरूपता (organic analogy)

स्पेंसर ने सामाजिक विकास के अपने विचार के द्वारा ज्ञान के सभी क्षेत्रों की जांच की है। मानव समाज की एक जीव के साथ तुलना करते हुए, स्पेंसर का अभिप्राय जैविक अनुरूपता से है। स्पेंसर ने यह महसूस किया कि जैविक जीव तथा समाज में कुछ अंतर है।

उसका कहना था कि एक समाज अस्तित्व के रूप में जीव से कुछ अधिक तथा उससे अलग होता है, हालांकि मानव प्राणी (व्यक्ति) समाज के अंग होते हैं। यह सामाजिक संगठन के तत्वों और उनके परस्पर निर्भर प्रकार्यों की मिली-जुली व्यवस्था है जिसमें व्यक्ति सामाजिक क्रियाओं की अपनी विधि को अपनाते हैं। समाज एक अधि-जैविक अस्तित्व (super organic entity) है और जीव के स्तर से ऊपर उठा हुआ अपने आप में ही एक अस्तित्व है।

इस स्थापना का अनुसरण करते हुए स्पेंसर ने इस विचार को मानने से इन्कार कर दिया कि समाज बहुत से व्यक्तियों की सामूहिकता के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। उसके अनुसार समाज बहुत से व्यक्तियों का समूह मात्र नहीं अपितु उससे अलग एक अस्तित्व वाला होता है। संपूर्ण अपने हिस्सों से कुछ अधिक होता है। जिस प्रकार, एक मकान ईटों, लकड़ी तथा पत्थर के मात्र एकीकरण से कुछ ज्यादा होता है उसी प्रकार समाज भी केवल सभी मनुष्यों की सामूहिकता ही नहीं है बल्कि अपने आप में एक अस्तित्व है। इसमें विभिन्न हिस्सों की एक निश्चित क्रमबद्धता समाहित होती है। परंतु स्पेंसर एक व्यक्तिवादी विचारक था, इसलिए उसका विश्वास था कि जैविक जीवों के विपरीत, जहां विभिन्न हिस्से संपूर्ण के लाभ के लिए अस्तित्व में रहते हैं, समाज में "संपूर्ण" विभिन्न हिस्सों के लिए अस्तित्व में रहता है अर्थात् समाज का अस्तित्व व्यक्तियों के लिए है (टिमाशेफ 1967: 38)।

समाजों का विकास

स्पेंसर सामाजिक विकास के संबंध में दो वर्गीकरण प्रणालियां बनाना चाहता था। पहली व्यवस्था के अनुसार सामाजिक विकास की प्रक्रिया में समाज अपने संघटन की श्रेणी के आधार पर सरल से सम्मिश्र समाज के विभिन्न स्तरों की ओर क्रियाशील है। इसी सामाजिक विकास को आरेख के रूप मे। चित्र 2.3 में दिये आरेख द्वारा व्यक्त किया गया है।

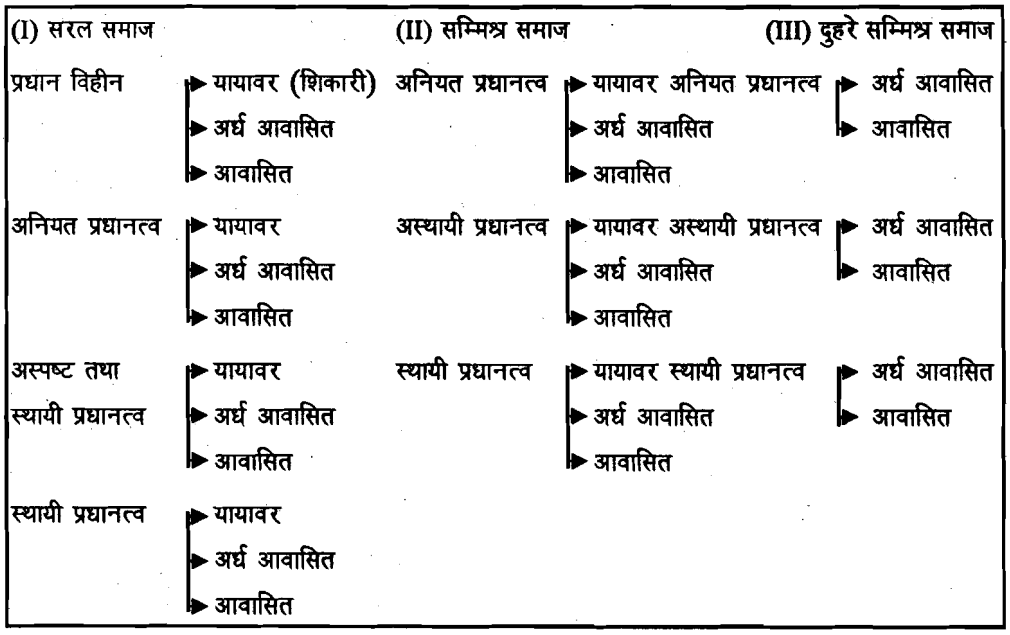

चित्र 2.3: समाजों का विकास

इस आरेख से आपको स्पेंसर द्वारा प्रतिपादित समाजों के विकास की प्रक्रिया समझ आ गई होगी। स्पेंसर के अनुसार कुछ साधारण समाजों के समुच्चय से सम्मिश्र समाज उत्पन्न होते हैं (इन्हें इस आरेख से नहीं दिया गया है)। स्पेंसर के अनुसार साधारण समाजों में परिवार होते हैं, सम्मिश्र समाज में परिवारों से मिलकर बने कुल होते हैं, दुहरे सम्मिश्र समाजों में कुलों से मिलकर बने जनजातीय समूह होते हैं और तिहरे सम्मिश्र समाजों में, जैसा कि हमारा समाज है, जनजातीय समूहों से मिलकर बने राष्ट्र और राज्य होते हैं (टिमाशेफ 1967: 40)।

दूसरी वर्गीकरण व्यवस्था प्ररूपों की संरचना पर आधारित है, जो वास्तव में तो विद्यमान नहीं होती किंतु विभिन्न समाजों के विश्लेषण तथा उनके बीच तुलना करने में यह सहायक हो सकती है। यहां पर विकास के एक भिन्न प्रकार अर्थात् सैन्य से औद्योगिक समाज तक के बारे में सोचा गया है।

i) युद्धप्रिय समाज

युद्धप्रिय समाज एक ऐसा समाज होता है जिसमें मुख्यत: आक्रामक तथा सुरक्षात्मक फौज़ी कार्रवाई के लिए संगठन किया जाता है। इस प्रकार के समाज के निम्नलिखित लक्षण होते हैं।

- इस प्रकार के समाजों के सदस्यों के बीच संबंध **अनिवार्य सहयोग (compulsory cooperation)** के आधार पर होते हैं।
- सत्ता तथा सामाजिक नियंत्रण का अत्यधिक केंद्रीकृत विन्यास
- मिथकों तथा विश्वासों का बाहुल्य जो समाज के श्रेणीक्रम स्वरूप को दृढ़ करता है।
- कठोर अनुशासन वाले कठिन जीवन तथा सार्वजनिक और निजी जीवन के बीच घनिष्ठ एकरूपता होती है।

ii) औद्योगिक समाज

औद्योगिक समाज में सैन्य कार्यकलाप तथा संगठन समाज के लिए बाह्य होते हैं। समाज मानव उत्पादन तथा कल्याण पर ध्यान सकेंद्रित होता है।

इस प्रकार के समाज के निम्नलिखित लक्षण होते हैं

- इन समाजों में **स्वैच्छिक सहयोग (voluntary cooperation)** की प्रधानता होती है।
- लोगों के वैयक्तिक अधिकारों को दृढ़ता से माना जाता है।
- सरकार के राजनीतिक नियंत्रण से आर्थिक क्षेत्र को पश्थक रखा जाता है।
- मुक्त समितियों और संस्थाओं का विकास होता है।

स्पेंसर यह जानता था कि किसी भी समाज को इन दोनों में से किसी व्यवस्था में पूरी तरह से सही उतरने की ज़रूरत नहीं है। विभिन्न वर्गीकृत समाज केवल वर्गीकरण में प्रतिरूपों का प्रयोजन सिद्ध करते हैं। ये हर्बर्ट स्पेंसर के कुछ मुख्य विचार हैं। आइए, अब अगले भाग में हम यह अध्ययन करें कि स्पेंसर के समाजशास्त्र संबंधी विचार समकालीन समय के लिए कितने प्रासंगिक हैं और समकालीन समाजशास्त्रियों पर उनका क्या प्रभाव पड़ा। परंतु पहले सोचिए और करिए 2 को पूरा कर लें।

सोचिए और करिए 2

हर्बर्ट स्पेंसर द्वारा दिए गए सामाजिक विकास संबंधी विचारों को आपने पढ़ा है। उसके विचारों के संदर्भ में तीन व्यक्तियों से चर्चा करें। इनमें से एक आपके दादा की पीढ़ी के हों, एक आपके पिता की पीढ़ी के और एक आपकी पीढ़ी के। चर्चा करते समय उनसे यह पता लगाइए कि उन्होंने विवाह, परिवार, अर्थव्यवस्था या राज्य व्यवस्था जैसी प्रमुख सामाजिक संस्थाओं में क्या-क्या परिवर्तन देखे हैं।

प्रत्येक पीढ़ी द्वारा सामाजिक संस्थाओं में जो सामाजिक परिवर्तन देखे गए है उनके ब्यौरों की तुलना करते हुए लगभग दो पृष्ठों की एक टिप्पणी लिखिए। यदि संभव हो तो उस टिप्पणी को अपने अध्ययन केंद्र के अन्य विद्यार्थियों की टिप्पणियों के साथ मिलाइए।

2.4.4 समकालीन समाजशास्त्र पर स्पेंसर के विचारों का प्रभाव

समाजशास्त्र के प्रथम प्रवर्तक कॉम्ट के विपरीत समाजशास्त्र के दूसरे प्रवर्तक स्पेंसर को समाजशास्त्र से बिलकुल भिन्न प्रत्याशाएं थीं। कॉम्ट लोगों को बेहतर समाज बनाने की ओर अग्रसर करना चाहता था जबकि स्पेंसर समाजशास्त्र के माध्यम से लोगों को यह दिखाना चाहता था कि मानव को समाज में चल रही सहज प्रक्रिया में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। स्पेंसर स्वतंत्रता की सहज मूल प्रवृत्ति में अटूट विश्वास रखता था और उसका विश्वास था कि यदि इस सहज वशत्ति में कोई हस्तक्षेप किया जाएगा तो वह हानिकारक होगा।

डार्विन से प्रभावित होकर स्पेंसर का सर्वोपयुक्त की उत्तरजीविता की धारणा में विश्वास था। डार्विन की तरह उसका भी कहना था कि प्रकृति में कमज़ोर और अयोग्य को समाप्त करने की ताक़त होती है। योग्यतम व्यक्ति वही है जो स्वस्थ है और बुद्धिमान है। उसके लिए राज्य एक संयुक्त पँजी कंपनी की तरह होता है जो व्यक्तियों के परस्पर हितों का संरक्षण करता है (टिमाशेफ़ 1967: 41)। उसके अनुसार प्रकृति मनुष्य की अपेक्षा अधिक प्रबल होती है अत: सरकार को इस विकास की प्रक्रिया में हस्तक्षेप करना बंद कर देना चाहिए। उसने सरकार को शिक्षा, सफ़ाई प्रबंध, बंदरगाहों के सुधार आदि जैसी गतिविधियाँ करने से मना किया। इस प्रकार, उसके लिए विक्टोरिया काल की अहस्तक्षेप की नीति अर्थात् मुक्त बाज़ार का समाज (जिसमें सरकार का कोई हस्तक्षेप नहीं होता और व्यक्ति परस्पर प्रतिस्पर्धा के लिए स्वतंत्र होते हैं) सभी समाजों में सर्वोत्तम था।

समाज को अतिजैविक व्यवस्था के रूप में समझने के बारे में स्पेंसर की अवधारणा में कई समस्याएं आईं। उसने संस्कृति को एकीकृत समाज का एक हिस्सा नहीं माना। समाजों का सरल से सम्मिश्र समाज की ओर सामाजिक विकास से संबंधित उसका विवेचन भी दोषपूर्ण था। हालांकि उसने वास्तविकता के लिए एक एकीकृत सिद्धांत बनाया। उसका विकास का सिद्धांत एक सार्वभौमिक (cosmic) सिद्धांत है और इसलिए टिमाशेफ़ (1967: 43) के अनुसार उसका सिद्धांत सही अर्थ में समाजशास्त्र की बजाए दर्शनशास्त्र का सिद्धांत है।

अपने समय में स्पेंसर बहुत लोकप्रिय था और यदि किसी बुद्धिजीवी ने उसकी पुस्तकें नहीं पढ़ी होती थीं तो यह उसके लिए लज्जास्पद माना जाता था। उसकी लोकप्रियता इंग्लैंड, संयुक्त राज्य अमरीका तथा रूस तक में फैल गई लेकिन फ्रांस तथा जर्मनी में उसे उतनी ख्याति नहीं मिली थी। उसके विचार इसलिए लोकप्रिय हो गए कि वे तत्कालीन स्थितियों के अनुसार थे। उदाहरणत: उसके विचार ज्ञान को एक कर देने की इच्छा तथा अहस्तक्षेप के सिद्धांत की वैज्ञानिक ढंग से व्याख्या करने में समर्थ थे। अहस्तक्षेप के सिद्धांत को एडम स्मिथ तथा रिकार्डो जैसे अर्थशास्त्रियों ने लोकप्रिय बनाया था। इस सिद्धांत से मुक्त बाज़ार की धारणा को समर्थन मिला जिसमें कीमतों का निर्धारण मांग और पूर्ति की शक्तियों के आधार पर होता था। इस तरह के बाज़ार में पूर्ण प्रतिस्पर्धा संभव हो सकती थी। यह सिद्धांत अट्ठारहवी-उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान लोकप्रिय हुआ क्योंकि अर्थशास्त्री तथा सामाजिक चिंतक यह मानते थे कि राष्ट्र की संपदा बढ़ाने का यही सर्वोत्तम ढंग था।

कॉम्ट और स्पेंसर दोनों समाजशास्त्र को समाज के विज्ञान की प्रस्थिति तक पहुंचाने में सफल हुए। अगली इकाई में आपको समाजशास्त्र के कुछ अन्य संस्थापक विद्वानों के बारे में जानकारी हासिल होगी।

बोध प्रश्न 2

i) निम्नलिखित में से किस-किस को हर्बर्ट स्पेंसर के चिंतन की विशेषता के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है?

क) विकास मूल अवधारणा है।

ख) सभी प्रकार का ज्ञान एक व्यवस्थित तथा परीक्षण योग्य कथनों से मिलकर बनेगा।

ग) परिवर्तन की सभी प्रक्रियाओं में स्पष्ट भिन्नता होती है।

घ) समाज का एक अधि जैविक (super organic) अस्तित्व होता है।

ड.) समाज व्यक्तियों के समूह से कुछ अधिक होता है।

च) समाज की दो वर्गीकरण प्रणालियां बनाई गई।

छ) संघटन के आधार पर जो व्यवस्था बनी उसमें सरल समाज, सम्मिश्र समाज, दुहरे सम्मिश्र समाज तथा तिहरे सम्मिश्र समाज सम्मिलित थे।

ज) एक भिन्न व्यवस्था में औद्योगिक तथा सैन्य समाज आते हैं।

झ) वैज्ञानिक ज्ञान असीमित होता है।

ii) सामाजिक विकास के संबंध में स्पेंसर के तर्कों को चार पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

iii) कॉम्ट और स्पेंसर के विचारों में क्या समानता है? तीन पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

2.5 सारांश

इस इकाई में आपने समाजशास्त्र के उदय के बारे में पढ़ा। आपने यह जाना कि मानव व्यवहार तथा मानव समाज का व्यवस्थित अध्ययन अपेक्षाकृत अभी हाल में शुरू हुआ है। हमने ऑगस्ट कॉम्ट (1798–1857) के जीवन और उसके सामाजिक परिवेश के बारे में भी बताया। वह समाजशास्त्र का प्रवर्तक माना जाता है। उसने समाज के विज्ञान को समाजशास्त्र की संज्ञा दी। हमने कॉम्ट के मुख्य विचारों के बारे में भी बताया। ये मुख्य विचार इस प्रकार हैं

- तीन अवस्थाओं का नियम: धर्मशास्त्रीय अवस्था, तत्वमीमांसीय अवस्था तथा सकारात्मक अवस्था
- विज्ञानों का श्रेणीक्रम
- स्थैतिक तथा गतिशील समाजशास्त्र

हमने समकालीन समाजशास्त्र में कॉम्ट के विचारों के महत्व पर भी चर्चा की।

इसी इकाई में हमने अंग्रेज़ समाजशास्त्री, हर्बर्ट स्पेंसर, के जीवन और उसके सामाजिक परिवेश के बारे में चर्चा की।

स्पेंसर को समाजशास्त्र का दूसरा प्रवर्तक माना जाता है। स्पेंसर के निम्नलिखित मुख्य विचारों पर भी हमने चर्चा की।

- विकासवादी सिद्धांत
- जैविक अनुरूपता
- समाजों का विकास, पहले संघटन के रूप में सरलता से सम्मिश्रता की ओर। दूसरा सैन्य समाज से औद्योगिक समाज में परिवर्तन के रूप में।

अंत में हमने समकालीन समाजशास्त्र में स्पेंसर के विचारों के महत्व पर चर्चा की।

2.6 शब्दावली

अनिवार्य सहयोग लोगों के बीच ऐसा सहयोग जो सत्ता पक्ष द्वारा अनिवार्य रूप से उन पर थोपा जाता है।

गतिशील कोई वस्तु या बल जो गतिशील अवस्था में हो। यह समाज में सामाजिक परिवर्तन का द्योतक है।

विकास एक दीर्घ समयावधि में हुए धीमे परिवर्तनों की प्रक्रिया जैसे अमीबा यथा कोशकीय प्राणी से जटिल बहुकोशिकीय प्राणी, यथा मानव के रूप में विकसित होता है।

तत्वमीमांसीय शाब्दिक अर्थ में, तत्वमीमांसा दर्शनशास्त्र की वह शाखा होती है जो प्रकृति तथा चिंतन के प्रथम सिद्धांतों का अन्वेषण करती है। कॉम्ट के लिए यह मस्तिष्क के विकास की एक अवस्था है जिसमें मस्तिष्क किसी घटना को अमूर्त अस्तित्वों या शक्तियों जैसे प्रकृति के माध्यम से विवेचना करता है। इस अवस्था में मानव प्राणी इस विश्व का अर्थ सार तत्वों आदर्शों आदि के रूप में विवेचित करते हैं।

पद्धति किसी सामाजिक घटना के बारे में सामग्री या तथ्य इकट्ठा करने का तरीका, जैसे प्रेक्षण, साक्षात्कार, सर्वेक्षण आदि की पद्धति।

सकारात्मक शाब्दिक रूप से सकारात्मक का अर्थ है कोई भी चीज जो हाँ में हो। कॉम्ट के लिए यह मस्तिष्क के विकास की अंतिम अवस्था है। यहां पर मानव के अस्तित्व के मूल स्रोतों अंतिम साध्य की खोज बंद हो जाती है। इसकी बजाय मानव घटनाओं को देखना तथा इन घटनाओं के बीच विद्यमान नियमित कड़ियों को स्थापित करना प्रारंभ कर देते हैं। इस प्रकार, सकारात्मक अवस्था में मानव तथ्यों के बीच कड़ी स्थापित करने वाले तथा सामाजिक जीवन को नियंत्रित करने वाले सामाजिक नियमों की खोज करने लगते हैं।

विज्ञान प्रेक्षण, अध्ययन तथा परीक्षण से हासिल हुआ व्यवस्थित ज्ञान। वैज्ञानिक ज्ञान का परीक्षण किया जा सकता है, प्रमाणित अथवा सिद्ध किया जा सकता है।

स्थैतिक कोई भी वस्तु या बल जो सामंजस्य में है या जो गतिशील नहीं होता। समाज में यह स्थिति समाज की संरचना की धारणा पर लागू होती है।

धर्मशास्त्रीय इसका शाब्दिक अर्थ है धर्म का अध्ययन किंतु कॉम्ट के लिए यह मस्तिष्क के विकास की पहली अवस्था है। इस अवस्था में मस्तिष्क घटनाओं को मानव प्राणी के तुलनीय प्राणियों या शक्तियों के द्वारा विवेचित करता है। यहां सभी विवेचन प्रेतात्माओं तथा दैविक शक्तियों से संबंधित मिथकों के रूप में होते है।

एकीकृत करना विज्ञान का व्यापक स्वरूप जो अस्तित्व के सभी पहलुओं का विवेचन करता है।

स्वैच्छिक सहयोग लोगों के बीच ऐसा सहयोग जो उन पर आरोपित नहीं होता अपितु उनके द्वारा स्वैच्छिक रूप से स्वीकार किया जाता है।

यूटोपियाई वह जो आदर्श परंतु अव्यवहारिक सुधार के बाद ऐसे समाज की कल्पना करे, जिसमें एक आदर्श सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था है।

2.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

कोज़र, लुइस ए. 1971. *मास्टर्स आफ़ सोशियोलॉजिकल थॉट आइडियाज़ इन हिस्टॉरिकल एण्ड सोशल कॉनटैक्स्ट.* हरकोर्ट ब्रेस जोवोनोविक: न्यूयार्क

हयूबर्ट, रेने 1963. *ऐनसाइकलोपीडिया आफ़ सोशल साइंसिज़.* वाल्यूम I-IV, पृष्ठ 151-142, मैकमिलन कम्पनी: न्यूयार्क

टिमाशेफ़, निकोलस एस. 1967. *सोशियोलॉजिकल थियरी: इटस नेचर एण्ड ग्रोथ.* रैंडम हाउस: न्यूयार्क

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) क, ख, घ, च, छ, ज

ii) क) कॉम्ट समाज के वैज्ञानिक नियमों का निर्माण करना चाहता था।

ख) कॉम्ट ने स्थैतिकी तथा गतिशीलता दोनों पर ध्यान केन्द्रित किया अर्थात् वह सामाजिक व्यवस्था का विश्लेषण तथा समय और स्थान में परिवर्तन होने वाले रूपों का अध्ययन करना चाहता था।

ग) कॉम्ट ने विज्ञानों के एक श्रेणीक्रम की रचना की, जिसमें समाजशास्त्र शिखर पर था।

iii) ऑगस्ट कॉम्ट ने समाज में श्रम विभाजन को सामाजिक विकास की प्रक्रिया में एक ताकतवर शक्ति के रूप में देखा। उसके अनुसार श्रम विभाजन का जनसंख्या वृद्धि के साथ घनिष्ठ संबंध होता है। समाज में जितना श्रम विभाजन होगा समाज उतना ही जटिल और विकसित होगा।

iv) समाज के बारे में पूर्वकालीन विचारों के विपरीत समाजशास्त्र एक ऐसे विज्ञान के रूप में विकसित हुआ जिसमें प्रेक्षण तथा प्रमाण के आधार पर समाज का व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है।

बोध प्रश्न 2

i) क, ख, घ, ड., च, छ, ज

ii) स्पेंसर का सिद्धांत विकासवादी सिद्धांत पर आधारित था। विकास की अवधारणा इस बात पर आधारित थी कि प्रकृति के हर रूप में परिवर्तन होता है और तत्व एक ही पदार्थ से व्युत्पन्न होता है। इसलिए विज्ञान का नियत कार्य ऐसे ज्ञान की रचना करना है जो हमारे चारों ओर दुनिया में होने वाले रूपांतरण के विभिन्न विन्यासों के ढंग का अध्ययन करे।

iii) कॉम्ट और स्पेंसर दोनों निम्नलिखित विचारों में समान विश्वास करते थे

क) वैज्ञानिक ज्ञान का नियत कार्य परीक्षण योग्य नियमों की स्थापना करना है।

ख) वैज्ञानिक नियत अंत:संबंधों के कथन होते हैं अर्थात् वे "सहअस्तित्व तथा अनुक्रम की समानता" वाले होते हैं।

ग) केवल वैज्ञानिक ज्ञान ही पूर्वनुमानों के लिए विश्वसनीय आधार प्रदान कर सकता है।